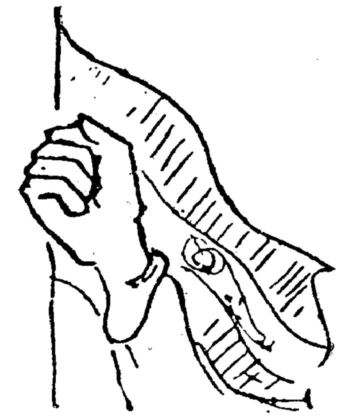

मुनि श्रीकन्हैयालालजी 'कमल' न्यायतीर्थ

आगम-साहित्य का पर्यालोचन

आगमसाहित्य का महत्त्व

आगमसाहित्य भारतीय साहित्य का प्राण तो है ही, आध्यात्मिक जीवन की जन्मभूमि एवं आर्य संस्कृति का मूल्यवान् कोश भी है.

विश्व के समस्त पंथ, मत या सम्प्रदायों के अपने-अपने आगम हैं. इनमें जैनागम साहित्य अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है. जर्मनी के डा० हर्मन जेकोबी, डा० शुब्रिंग' आदि अनेक प्रसिद्ध विदेशी विद्वानों ने जैनागमों का अध्ययन करके विश्व को यह बता दिया कि अहिंसा, अनेकान्त, अपरिग्रह एवं सर्वधर्मसमन्वय के चिंतन-मनन से परिपूर्ण एवं आध्यात्मिक जीवन से आलोकित आगम यदि विश्व में हैं तो केवल जैनागम हैं.

आगमशब्द की व्याख्या—आ-उपसर्ग और गम् धातु से आगम शब्द की रचना हुई है. आ-उपसर्ग का अर्थ 'समन्तात्' अर्थात् पूर्ण है, गम्-धातु का अर्थ गति—प्राप्ति है.

आगम शब्द की व्युत्पत्ति—जिससे वस्तुतत्त्व [पदार्थरहस्य] का पूर्ण ज्ञान हो वह आगम है[1] जिससे पदार्थों का यथार्थ ज्ञान हो वह आगम है.[2] जिससे पदार्थों का मर्यादित ज्ञान हो वह आगम है.[3] आप्तवचन से उत्पन्न अर्थ [पदार्थ] ज्ञान आगम कहा जाता है. उपचार से आप्त वचन भी आगम माना जाता है.

अंग आगम वीतरागवाणी है

जैनागमों [अंगों] में वीतराग भगवान् की वाणी है. वीतरागता का अर्थ है रागरहित आत्मदशा. जहां द्वेष वहां राग है जहां राग नहीं वहां द्वेष भी नहीं. क्योंकि राग और द्वेष अविनाभावी हैं. किंतु इनकी व्याप्ति अग्नि और धूम की तरह की व्याप्ति है. अतः जहां राग है वहां द्वेष होता ही है. जहां राग हो वहां द्वेष कभी नहीं भी होता है, इसलिए सर्वत्र 'वीतराग' शब्द का ही प्रयोग हुआ है. वीतद्वेष शब्द का नहीं.

सराग दशा रागद्वेष से युक्त आत्मदशा है, मायापूर्वक मृषा भाषण इस दशा में ही होता है, इसलिए सरागदशा का कथन सर्वथा प्रामाणिक नहीं होता. जैनागमों की प्रामाणिकता का मूलाधार यही है. यद्यपि अंग आगमों का अधिकांश भाग नष्ट हो गया है और जो है उसमें कतिपय अंश पूर्ति रूप हैं, परिवर्धित हैं, फिर भी उसमें वीतरागवाणी सुरक्षित है. जो पूर्ति रूप है, परिवर्धित हैं वह भी वीतराग वाणी से विपरीत नहीं है.

---

१. आ-समन्ताद् गम्यते वस्तुतत्त्वमनेनेत्यागमः.

२. आगम्यन्ते मर्यादयाऽवबुद्ध्यन्तेऽर्थाः अनेनेत्यागमः.

३. आ-अभिविधिना सकलश्रुतविषयव्याप्तिरूपेण, मर्यादया वा यथावस्थितप्ररूपणारूपया गम्यन्ते—परिच्छिद्यन्ते अर्थाः येन स आगमः

४. आप्तवचनादाविर्भूतमर्थसंवेदनमागमः उपचारादाप्त वचनं च.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगमों की भाषा

जैनागमों की भाषा अर्धमागधी के सम्बन्ध में दो विकल्प प्रसिद्ध हैं—

अर्ध मागध्याः—अर्थात् जिसका अधांश मागधी का हो वह अर्धमागधी कहलाती है, जिस भाषा में आधे शब्द मगध के और आधे शब्द अठारह देशी भाषाओं के मिश्रित हों.

अर्ध मगधस्य—अर्थात्—मगध के आधे प्रदेश की भाषा. वर्तमान में उपलब्ध सभी आगमों की भाषा अर्धमागधी है, यह श्रमणपरम्परा की पराम्परागत धारणा है, किंतु आधुनिक भाषाविज्ञान की दृष्टि से आगमों की भाषा के सम्बन्ध में अन्वेषण आवश्यक है.

भाषा की दृष्टि से अन्वेषणीय आगमांशः—[१] आचारांग प्रथम श्रुतस्कंध और सभी शेष आगमों की भाषा. [२] प्रश्नव्याकरण और ज्ञाताधर्म कथा. [३] रायपसेणिय का सूर्याभवर्णन. [४] जीवाभिगम का विजयदेववर्णन [५] उत्तराध्ययन और सूत्रकृतांग का पद्यविभाग. [६] आचारांग द्वितीय श्रुतस्कंध और छेदसूत्रों की भाषा.

आगमों की अर्धमागधी भाषा ही आर्यभाषा है

प्रज्ञापना के अनुसार जो अर्धमागधी भाषा बोलता है वह भाषा-आर्य है अर्थात् केवल भाषा की दृष्टि से आर्य है. म्लेच्छ होते हुए भी जो अर्धमागधी बोलता है वह भाषा-आर्य है. जिस प्रकार एक भारतीय अंग्रेजी खूब अच्छी तरह बोल लेता है वह जन्मजात भारतीय होते हुए भी भाषा—अंग्रेज है. और जो अंग्रेज हिन्दी अच्छी तरह बोल लेता है वह जन्मजात अंग्रेज होते हुये भी भाषा-भारतीय है. प्रज्ञापना के कथन का यह अभिप्राय हो जाता है कि आर्यों की भाषा अर्धमागधी भाषा ही है.

आर्यदेश साड़े पच्चीस हैं. उनमें आर्य अधिक हैं. वे यदि अर्धमागधीभाषा बोलें अथवा [वर्तमान-अंग्रेजी भाषा की तरह] अर्धदेशों में अर्धमागधी भाषा का सर्वत्र व्यापक प्रचार व प्रसार रहा हो और वही राजभाषा रही हो तो प्रज्ञापना के इस कथन की संगति हो सकती है.

क्या सभी तीर्थंकर अर्धमागधी भाषा में ही देशना देते थे ?

भगवान् महावीर मगध के जिस प्रदेश में पैदा हुये और बड़े हुये उस प्रदेश की भाषा[1] [अर्धमागधी] में भगवान् ने उपदेश दिया किंतु शेष तीर्थंकर भारत के विभिन्न भागों के थे, वे सब ही अपने प्रान्त की भाषा में उपदेश न करके केवल अर्धमागधी भाषा में ही प्रवचन करते थे; यह मानना कहाँ तक तर्कसंगत है, यह विचारणीय है.

भगवान् ऋषभदेव से भगवान् महावीर तक [४२ हजार वर्ष कम कोड़ाकोड़ी सागरोपम] की इस लम्बी अवधि में मगधी भाषा में कोई परिवर्तन हुआ या नहीं ? जब कि भगवान् महावीर के निर्वाण के काल के पश्चात् केवल २४०० वर्ष की अवधि में मगध की भाषा में कितना मौलिक परिवर्तन हो गया है ?

आगमों के प्रति अगाध श्रद्धा

आगमसाहित्य ऐसा साहित्य है जिस पर मानव की अटल एवं अविचल श्रद्धा चिर काल से रही है, और रहेगी. मानव

---

१. **सव्वभासाणुगामिणीए सरस्सइए जोयणणीहारिणा सरेणं, अद्धमागहाए भासाए धम्मं परिकहेइ. तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अगिलाए धम्ममाइक्खइ, साऽवि य णं अद्धमागहा भासा, तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं अप्पणो सभासाए परिणामेणं परिणमइ. —औपपातिक,**

सभी भाषाओं में परिणत होने वाली सरस्वती के द्वारा एक योजन तक पहुंचने वाले स्वर से, अर्ध मागधी भाषा में धर्म को पूर्ण रूप से कहा, उन सभी आर्य-अनार्यों को अग्लानि से (तीर्थंकर नामकर्म के उदय से अनायास-विना थकावट के) धर्म कहा. वह अर्धमागधी भाषा भी उन सभी आर्यो-अनार्यों की अपनी अपनी स्वभाषा में परिवर्तित हो जाती थी.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की इस श्रद्धा का केन्द्रबिंदु है आगमों की प्रामाणिकता. अतएव जैन और जैनेतर दार्शनिकों ने आगम को सर्वोपरि प्रमाण माना है.

विभिन्न परम्पराओं में आगम—वैदिक परम्परा वेदों को आगम मानती है. वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है, ज्ञान स्वयं प्रकाशमान है, ज्ञान की सत्ता अखण्ड है, अतएव ज्ञान का निर्माण किसी पुरुषविशेष के द्वारा नहीं हो सकता. ईश्वर भी ज्ञान का कर्त्ता नहीं हो सकता, क्योंकि वह तो स्वयं ज्ञानस्वरूप है. अभिप्राय यह है कि ज्ञान साधन है, साध्य नहीं अपितु स्वयं सिद्ध है. इसलिए वेद अपौरुषेय हैं. जैन दार्शनिकों ने वेदों की अपौरुषेयता और नित्यता का निषेध किया है वह उसके शाब्दिक रूप को लेकर ही समझना चाहिए. शब्दरचना कोई अनादि नहीं हो सकती है.

जैन आगमों के समान वेदों के कुछ प्रमुख विषयविभाग हैं, जिन्हें जैन भाषा में अनुयोग-विभाग कहा जा सकता है, यथा—ऋग्वेद ज्ञानकाण्ड, यजुर्वेद कर्मकाण्ड, सामवेद—उपासनाकाण्ड और अथर्ववेद-विज्ञानकाण्ड है.

'अंगानि चतुरो वेदा' चारों वेद अंग हैं. इनके उपांग शतपथ ब्राह्मण आदि ब्राह्मण ग्रंथ हैं. जैनागमों के समान वैदिक परम्परा में भी अंगोपांग माने गये हैं. भगवती शतक २ उद्देशक १ में स्कंदक परिव्राजक के वर्णन में लिखा है कि 'चउण्हं वेदाणं संगोवंगाणं,' स्कंदक परिव्राजक सांगोपांग चारों वेदों का ज्ञाता था. अंग उपांग में साहित्य को विभाजित करने की पद्धति इतनी पुरानी है कि उसका इतिहास प्रस्तुत नहीं किया जा सकता.

श्रुतपुरुष की तरह वेदपुरुष की कल्पना भी अति प्राचीन है. यथा—

> **छन्दः पादौ तु वेदस्य, हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते ।**
> **ज्योतिषामयनं चक्षुः, निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ।**
> **शिक्षा घ्राणं च वेदस्य, मुखं व्याकरणं स्मृतम् ।**
> **तस्मात्सांगमधीत्यैव, ब्रह्मलोके महीयते ।** —पाणिनीय शिक्षा

बौद्ध परम्परा त्रिपिटकों को आगम मानती है. पिटक पेटी को कहते हैं. तीन पिटक अर्थात् तीन पेटियां. विनयपिटक [आचारशास्त्र], सुत्तपिटक [बुद्ध के उपदेश] और अभिधम्मपिटक [तत्त्वज्ञान]. पिटक साहित्य विशाल साहित्य है. बिहार राज्य के पालीप्रकाशनमण्डल ने देवनागरी लिपि में तीनों पिटकों का ४० जिल्दों में प्रकाशन किया है.

अंतिम बुद्ध गौतम बुद्ध ने और उनके पूर्ववर्ती अनेक बुद्धों ने जो कहा है उसी का इन पिटकों में संकलन है.

कपिलवस्तु नाम का नगर बुद्ध की जन्मभूमि है. उस युग में वहां की जनभाषा पाली रही होगी. उस भाषा में बुद्ध ने उपदेश दिया और त्रिपिटिकों की रचना भी उसी भाषा में हुई है.

जैनपरम्परा के आगम द्वादशांग गणिपिटक [आचार्य की ज्ञानमंजूषा] हैं. यह गणिपिटक ध्रुव, नित्य एवं शाश्वत है. इसकी नित्यता शब्दों की अपेक्षा से नहीं अपितु अर्थ [भाव] की अपेक्षा से है और वह भी महाविदेश क्षेत्र की अपेक्षा से है. जो नित्य होता है वह अपौरुषेय है. शाश्वत सत्य कभी पौरुषेय नहीं होता है. पुनः तीर्थंकर होते हैं और उस तिरोहित तथ्य को व्यक्त करते हैं. यह क्रम अनादि काल से चल रहा है एवं अनन्तकाल तक चलता रहेगा.

आगमों की अधिकतम संख्या

भगवान् ऋषभदेव के समय में अंगोपांगादि के अतिरिक्त चौरासी हजार प्रकीर्णक थे. भगवान् अजितनाथ से भगवान् पार्श्वनाथ पर्यन्त प्रत्येक तीर्थंकर के समय में संख्येय हजार प्रकीर्णक थे. भगवान् महावीर के समय में १४ हजार प्रकीर्णक थे.

श्री देवर्धिगणी क्षमाश्रमण के समय में आगमों की अधिकतर संख्या ८४ रह गई थी, वर्तमान में केवल ४५ आगम उपलब्ध हैं, शेष सभी आगम विलुप्त हो गये हैं. नन्दीसूत्र में ८४ आगमों के नाम इस प्रकार है :

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वादशांगों के नाम

१. आचारांग, २. सूत्रकृतांग, ३. स्थानांग, ४. समवायांग, ५. भगवतीसूत्र,[१] ६. ज्ञाताधर्मकथा, ७. उपासकदशा ८. अंतकृत्दशा, ९. अणुत्तरोपपातिक दशा, १०. प्रश्नव्याकरण, ११. विपाक श्रुत, १२. दृष्टिवाद[२] (विलुप्त है).

द्वादश उपांगों के नाम

[१] औपपातिक, [२] राजप्रश्नीय, [३] जीवाभिगम, [४] प्रज्ञापना, [५] सूर्य प्रज्ञप्ति, [६] चन्द्र प्रज्ञप्ति, [७] जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, [८] (निरयावलिका) कल्पिका, [९] कल्पावतंसिका, [१०] पुष्पिका, [११] पुष्प चूलिका, [१२] वृष्णि दशा.

पाँच मूल सूत्रों के नाम

[१] दशवैकालिक, [२] उत्तराध्ययन, [३] नन्दीसूत्र,[3] [४] अनुयोग द्वार सूत्र, [५] आवश्यक सूत्र.

छह छेद सूत्रों के नाम

[१] बृहत्कल्प, [२] व्यवहार, [३] दशाश्रुत स्कंध, [४] निशीथ, [५] महानिशीथ,[४] [६] पंचकल्प.

प्रकीर्णकों के नाम

[१] चतुःशरण, [२] आतुर प्रत्याख्यान, [३] भक्त परिज्ञा, [४] संस्तारक, [५] तंदुल वैचारिक, [६] चंद्रवैध्यक [७] देवेन्द्रस्तव, [८] गणिविद्या, [९] महा प्रत्याख्यान, [१०] वीरस्तव, [११] अजीवकल्प, [१२] गच्छाचार [१३] मरणसमाधि, [१४] सिद्ध प्राभृत, [१५[तीर्थोद्गार, [१६] आराधनापताका, [१७] द्वीपसागर प्रज्ञप्ति, [१८] ज्योतिष करंडक, [१९] अंगविद्या, [२०] तिथि प्रकीर्णक, [२१] पिंड निर्युक्ति, [२२] सारावली, [२३] पर्यन्ताराधना, [२४] जीवविभक्ति, [२५] कवच, [२६] योनि प्राभृत, [२७] अंगचूलिका, [२८] बंग चूलिका, [२९[वृद्धचतुःशरण, [३०] जम्बूपयन्ना.

नियुक्तियों के नाम

१ आवश्यक, २ दशवैकालिक, ३ उत्तराध्ययन, ४ आचारांग, ५ सूत्रकृतांग, ६ बृहत्कल्प, ७ व्यवहार, ८ दशाश्रुतस्कंध, ९ कल्पसूत्र, १० पिण्ड, ११ ओघ १२ संसक्त.[५]

शेष सूत्रों के नाम

१ कल्पसूत्र, २ यति-जीत कल्प, ३ श्राद्ध-जीत कल्प' ४ पाक्षिक सूत्र, ५ खामणा सूत्र, ६ वंदित्तु सूत्र, ७ ऋषिभाषित सूत्र.

वर्गीकरण—नन्दीसूत्र में ८४ आगमों का वर्गीकरण इस प्रकार है :

कालिक ३७, उत्कालिक २९, अंग १२, दशा ५, आवश्यक १.

वर्तमान में उपलब्ध ४५ आगमों के नाम :

---

१. समवायांग-नन्दी सूत्रमें भगवती सूत्र का 'वियाह' नाम दिया है. वियाह का संस्कृत 'व्याख्या' होता है. अनेक आगमों में 'जहा पण्णत्तीए' से भगवती सूत्र का 'पन्नत्ति' यह संक्षिप्त नाम सूचित किया है. भगवती सूत्र का वास्तविक नाम 'वियाहपण्णत्ति' है. टीकाकार इसका संस्कृत नाम 'व्याख्याप्रज्ञप्ति' देते हैं. 'भगवती सूत्र' यह नाम केवल महत्ता (पूज्यता) सूचक है, वास्तविक नहीं; किन्तु जनसाधारण में यही नाम अधिक प्रसिद्ध है.

२. वर्तमान में दृष्टिवाद के विलुप्त होने पर उसके स्थान में विशेषावश्यक भाष्य का नाम मिलाकर ८४ संख्या की पूर्ति कर ली गई है.

३. नन्दीसूत्र और अनुयोगद्वार सूत्र को चूलिका सूत्र भी कहते हैं.

४. छठा छेद सूत्र 'पंचकल्प' इस समय विलुप्त है.

५. सूर्यप्रज्ञप्ति-नियुक्ति और ऋषिभाषित नियुक्ति वर्तमान में उपलब्ध नहीं है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अंग ११, उपांग १२, मूल ४, छेद सूत्र ६, प्रकीर्णक १०, चूलिका सूत्र २.

दिगम्बर परम्परा के आचार्य वर्तमान में उक्त ८४ आगमों को विलुप्त मानते हैं. श्वेताम्बर परम्परा के आचार्य उपलब्ध ४५ आगमों के अतिरिक्त शेष आगमों को विलुप्त मानते हैं.

स्थानकवासी और तेरहपंथी परम्परा के आचार्य केवल ३२ आगमों को ही प्रामाणिक मानते हैं. इनका माना हुआ क्रम इस प्रकार है :

११ अंग, १२ उपांग, ४ मूल सूत्र, ४ छेदसूत्र. १ आवश्यक=योग ३२.

द्वादशांगों के पद

सूत्र के जितने अंश से अर्थ का बोध होता है उतना अंश एक पद होता है.[1] यहां द्वादशांगों के पदों की संख्या समवायांग और नन्दी सूत्र के अनुसार उद्धृत की गई है.

शास्त्र का नाम	पदपरिमाण
१. आचारांग[2]	१८ हजार
२. सूत्रकृतांग[3]	३६ हजार
३. स्थानांग	७२ हजार
४. समवायांग	१ लाख ४४ हजार
५. भगवतीसूत्र[4]	२ लाख ८८ हजार
६. ज्ञाताधर्मकथा[5]	५ लाख ७६ हजार
७. उपासकदशा[6]	११ लाख ५२ हजार
८. अन्तकृद्दशा	२३ लाख ४४ हजार
९. अनुत्तरोपपातिक	४६ लाख ८ हजार
१०. प्रश्नव्याकरण	९२ लाख १६ हजार
११. विपाकश्रुत[7]	१ करोड़े ८४ लाख ३२ हजार
१२. दृष्टिवाद[8]	——

---

१. यत्राऽर्थोपलब्धिस्तत्पदम्—नन्दी० टीका

२. समवायांग और नन्दी सूत्र के अनुसार आचारांग के दोनों श्रुतस्कन्धों के १८ हजार पद हैं. किन्तु आचारांग निर्युक्ति में केवल ९ अध्ययनों के ही १८ हजार पद माने हैं. पिंडैषणा, सप्तसप्तिका भावना एवं निर्युक्ति, इन चार चूलिकाओं के पद मिलाने से पदों की संख्या बहु (अधिक) होती है. और निशीथ चूलिका के पद मिलाने से बहुतर (अत्यधिक) संख्या होती है.

३. पूर्व अंगों से उत्तर उत्तर अंगों में दुगुने पद होते हैं—'पदपरिमाणं च पूर्वस्मात् अंगात् उत्तरस्मिन् उत्तरस्मिन् अंगे द्विगुणमवसेयम्—नन्दी टीका. सूत्रकृतांगनिर्युक्ति में भी ऐसा ही उल्लेख है.

४. समवायांग के अनुसार भगवती सूत्र के केवल १८ हजार पद ही हैं. भगवती सूत्र में भी इतने ही पद लिखे हैं. यथा—गा० चुलसीय सयसहस्सा, पयाण पवरवरणाणदंसीहिं, भावाभावमणंत्ता पन्नता एत्थमंगंमि. संभव है नंदी सूत्र में विस्तृत वाचना के पदों की संख्या का उल्लेख हुआ होगा.

५. ज्ञाता धर्मकथा के ५ लाख ७६ हजार पद हैं, किन्तु समवायांग और नन्दी सूत्र में संख्येय हजार पदों का ही उल्लेख है.

६. उपासकदशा के पदों का परिमाण देखते हुए ऐसा अनुमान होता है कि इतना बड़ा उपासकदशा सूत्र भ० महावीर के पहिले कभी रहा होगा, क्योंकि नन्दी और समवायांग के अनुसार भ० महावीर के दश प्रमुख श्रावकों का वर्णन तो विद्यमान उपासक दशा में है, फिर कौन से अन्य श्रावकों का वर्णन इसमें था—जिनके वर्णन में इतने पदों का यह विशाल आगम भ० महावीर के काल में रहा ?

७. विपाकश्रुत के १ करोड़ ८४ लाख ३२ हजार पद हैं किन्तु समवायांग और नन्दी सूत्र में संख्येय लाख पदों का ही उल्लेख है.

८. दृष्टिवाद (१४ पूर्वो) के करोड़ों पद हैं किन्तु समवायांग और नन्दी सूत्र में संख्येय हजार पदों का ही उल्लेख है. यथा—संखेज्जाइं पयसहस्साइं पयग्गेणं—सम—नन्दी० मूल.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चौदह पूर्वों के नाम	पदपरिमाण
१. उत्पाद पूर्व	१ करोड़
२. अग्रणीय ,,	९६ लाख
३. वीर्य ,,	७० लाख
४. अस्तिनास्तिप्रवाद पूर्व	६० लाख
५. ज्ञानप्रवाद पूर्व	९९ लाख ९९ हजार ९९९
६. सत्यप्रवाद "	१ करोड़ ६
७. आत्मप्रवाद "	२६ करोड़
८. कर्मप्रवाद "	१ करोड़ ८० हजार
९. प्रत्याख्यानप्रवाद पूर्व	८४ लाख
१०. विद्यानुप्रवाद "	१ करोड़ १० लाख
११. अवंध्य "	२६ करोड़
१२. प्राणायु "	१ करोड़ ५६ लाख
१३. क्रियाविशाल "	९ करोड़
१४. लोकबिन्दुसार "	१२½ करोड़

शेष आगमों (उपांग, छेद, मूल, और प्रकीर्णकों) के पदों की संख्या का उल्लेख किसी आगम में नहीं मिलता.

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति के पद[1] ३०५००० थे. चन्द्रप्रज्ञप्ति के पद ५५०००० थे. सूर्यप्रज्ञप्ति के पद ३५०००० थे.

नंदीसूत्र की चूर्णि में द्वादशांग श्रुत को पुरुष रूप में चित्रित किया है. जिस प्रकार पुरुष के हाथ पैर आदि प्रमुख अंग होते हैं, उसी प्रकार पुरुष के रूप में श्रुत के अंगों की कल्पना पूर्वाचार्यों ने प्रस्तुत की है—

आचारांग और सूत्रकृतांग श्रुत-पुरुष के दो पैर
स्थानांग और समवायांग पिंडलियाँ
भगवती सूत्र और ज्ञाताधर्मकथा दो जँघायें हैं
उपासकदशा पृष्ठ भाग
अंतकृद्दशा दशा अग्रभाग (उदर आदि)
अनुत्तरोपपातिक और प्रश्नव्याकरण दो हाथ
विपाकश्रुत ग्रीवा और
दृष्टिवाद मस्तक है (देखिए चित्र)

द्वादश उपांगों की रचना के पश्चात् श्रुत-पुरुष के प्रत्येक अंग के साथ एक-एक उपांगकी कल्पना भी प्रचलित

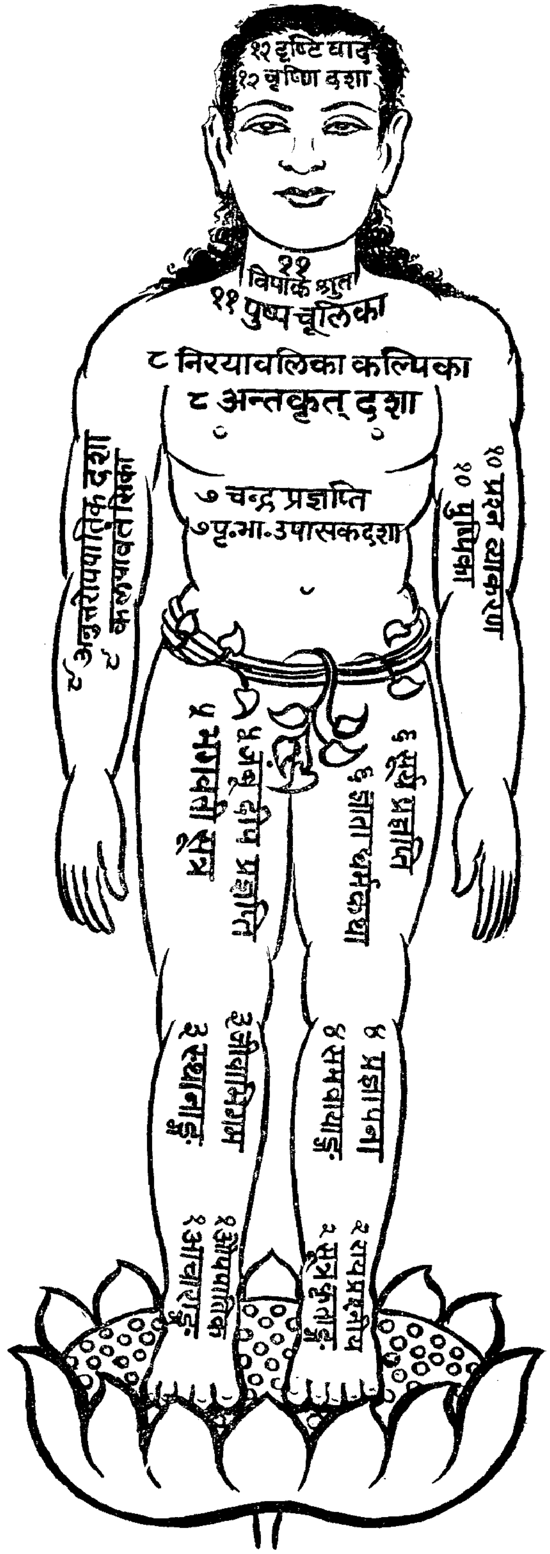

१. केवल इन तीन उपाङ्गों के पदों का उल्लेख स्व० आचार्य श्रीअमोलक ऋषिजी महाराज ने जैन तत्त्व प्रकाश (संस्करण ८वें में) में किया है किन्तु चन्द्रप्रज्ञप्ति और सूर्यप्रज्ञप्ति के पदों में इतना अन्तर क्यों है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होगई. यहाँ पहले अंग का और उसके सामने उसके उपांग का उल्लेख किया जाता है—

१ आचारांग	औपपातिक सूत्र
२ सूत्रकृतांग	राजप्रश्नीय
३ स्थानांग	जीवाभिगम
४ समवयांग	प्रज्ञापना
५ भगवती सूत्र	जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति
६ ज्ञाताधर्मकथा	सूर्यप्रज्ञप्ति
७ उपासकदशा	चन्द्र प्रज्ञप्ति
८ अंतकृद्दशा	निरयावलिका कल्पिका
९ अनुत्तरोपपातिकदशा	कल्पावतंसिका
१० प्रश्न व्याकरण	पुष्पिका
११ विपाकश्रुत	पुष्पचूलिका
१२ दृष्टिवाद	वृष्णिदशा

श्रुत-पुरुष की कल्पना एक अति सुन्दर कल्पना है. प्राचीन भण्डारों में श्रुतपुरुष के हस्तलिखित कल्पनाचित्र अनेक उपलब्ध होते हैं. मानव-शरीर के अंग-उपांगों की संख्या के सम्बन्ध में आचार्यों के अनेक मत हैं, किन्तु यहाँ श्रुतपुरुष के बारह अंग और बारह उपांग ही माने गये हैं :

स्थानांग और समवायांग आगम पुरुष की दो जांघें (पिण्डलियां) हैं. जीवाभिगम और प्रज्ञापना ये दोनों इनके उपांग हैं. किन्तु जाँघों के उपांग पुरुष की आकृति में कौन से हैं ? इसी प्रकार उरू, उदर, पृष्ठ और ग्रीवा के उपांग कौन से हैं ? क्योंकि शरीर-शास्त्र में पैरों की अंगुलियाँ पैरों के उपांग हैं. इसी प्रकार हाथों के उपांग हाथों की अंगुलियाँ, मस्तक के उपांग आँख, कान, नाक, और मुंह हैं. यदि इनके अतिरिक्त और भी उपांग होते हैं तो उनका निर्देश करके आगम पुरुष के उपांगों के साथ तुलना की जानी चाहिए.

अंगों में कहे हुए अर्थों का स्पष्ट बोध कराने वाले उपांग सूत्र[२] हैं. प्राचीन आचार्यों के इस मन्तव्य से कतिपय अंगों के उपांगों की संगति किस प्रकार हो सकती है ? यथा—ज्ञाताधर्मकथा का उपांग सूर्यप्रज्ञप्ति और उपासकदशा का उपांग चन्द्रप्रज्ञप्ति माना गया है. इनमें क्या संगति है ?

"निरयावलियाओ" का शब्दार्थ है—नरकगामी जीवों की आवली अर्थात्—श्रेणी. इस अर्थ के अनुसार एक "कप्पिया" नामक उपांग है. निरयावलियाओ में मानना उचित है. श्रेणिक राजा के काल सुकाल आदि दश राजकुमारों का वर्णन इस उपांग में है. ये दश राजकुमार युद्ध में मरकर नरक में गये थे.

कप्पिया नाम की अर्थसंगति इस इकार है—

कल्प अर्थात् आचार-सावद्याचार और निरवद्याचार, ये आचार के प्रमुख दो भेद हैं, इस उपांग में सावद्याचार के फल का कथन है इसलिए कप्पिया नाम सार्थक है. किन्तु इस प्रकार की गई अर्थसंगति को आधुनिक विद्वान् केवल कष्ट-कल्पना ही मानते हैं. वे कहते हैं-कल्प-अर्थात् देव विमान और कल्पों में उत्पन्न होने वालों का वर्णन जिसमें है वह उपांग कल्पिका है. सम्भव है वह उपांग विलुप्त हो गया है.

---

१. भगवती सूत्र का उपांग सूर्यप्रज्ञप्ति और ज्ञाताधर्मकथा का उपांग जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति है. —सुबोधासमाचारी

२. "अंगार्थस्पष्टबोधविधायकानि उपांगानि" औप० टीका.

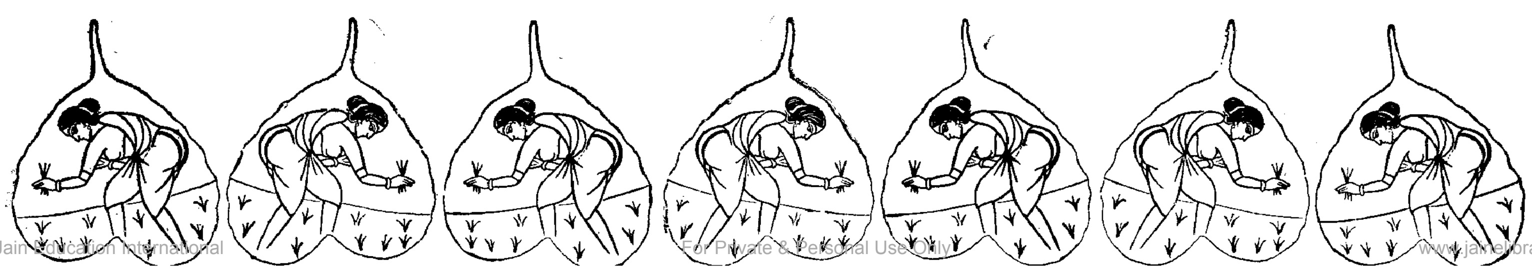

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकादशाङ्गों का उद्देशन काल[1]

क्रमांक	अंगसूत्रों के नाम	उद्देशन काल	क्रमांक	अंगसूत्रों के नाम	उद्देशन काल
१	आचारांग	८५ "	७	उपासक दशा	१० "
२	सूत्रकृताङ्ग	३३ "	८	अन्तकृद्दशा	१० "
३	स्थानांग	२१ "	९	अनुत्तरोपपातिकदशा	१० "
४	समवायांग[2]	१ "	१०	प्रश्नव्याकरण[5]	४५ "
५	भगवती[3]	६५ "	११	विपाकश्रुत	२० "
६	ज्ञाताधर्मकथा[4]	२९ "			३२९ दिन.

उपांग, छेदसूत्र, मूलसूत्र आदि आगमों के उद्देशनकालों का कहीं उल्लेख नहीं मिलता है अतः इसका अध्ययन वाचनाचार्य के समीप न करके स्वतः करें तो कोई हानि नहीं है, ऐसी मान्यता परम्परा से प्रचलित है.

बहुश्रुत होने के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम

कितने वर्ष के दीक्षापर्याय वाला श्रमण किस आगम के अध्ययन का अधिकारी होता है, इसकी एक नियत मर्यादा बतलाई गई है. वह इस प्रकार है—

तीन वर्ष के दीक्षापर्याय वाला आचार प्रकल्प (निशीथ सूत्र) के अध्ययन का अधिकारी माना गया है. इसी प्रकार चार वर्ष के दीक्षापर्याय वाला सूत्रकृतांग के, पाँच वर्ष वाला दशाश्रुतस्कन्ध, कल्प एवं व्यवहार के, आठ वर्ष वाला स्थानांग और समवायांग के, दस वर्ष वाला भगवती के, ग्यारह वर्षवाला, क्षुल्लिकाविमान आदि पांच आगमों के, बारहवाला अरुणोपपात आदि पांच आगमों के, तेरह वर्ष वाला उत्थान श्रुतादि चार आगमों के, चौदहवर्ष वाला आशिविषभावना के, पन्द्रह वर्षवाला दृष्टिविषभावना, सोलह वर्ष वाला चारणभावना, सत्तरह वर्ष वाला महास्वप्न भावना के, अठारह वर्ष वाला तेजोनिसर्ग के, उन्नीस वर्ष वाला दृष्टिवाद के और बीस वर्ष के दीक्षापर्याय वाला सभी आगमों के अध्ययन के योग्य होता है.[6]

—व्यवहार, उद्देश्यक १०

उपाध्याय और आचार्य पद की योग्यता प्राप्त करने के लिए आगमों का निर्धारित पाठ्यक्रम

तीन वर्ष की दीक्षा पर्याय वाला श्रमण यदि पवित्र आचरण वाला, शुद्ध संयमी, अनुशासन में कुशल, क्षमावान, बहुश्रुत

---

१. समवायांग और नंदीसूत्र के अनुसार यहाँ ग्यारह अंगों के उद्देशन काल लिखे हैं. समवायांग में ज्ञाताधर्मकथा के उद्देशन काल २९ लिखे हैं और नंदीसूत्र में १९ उद्देशन काल हैं.

२. समवायांग का एक उद्देशन काल ही क्यों है, यह विचारणीय है. उपासकदशा आदि कई आगम समवायांग की अपेक्षा लघुकाय हैं किन्तु उनके उद्देशन काल १० से कम नहीं.

३. समवयांग और नन्दीसूत्र में भगवती सूत्र के उद्देशनकाल नहीं लिखे—किन्तु भगवतीसूत्र की प्रशस्ति में उद्देशनकालों की एक सूची है उसके अनुसार उद्देशनकाल लिखे हैं.

४. प्रारम्भ के ६ अंगों के अन्त में उद्देशनकालों का उल्लेख नहीं है और अंतिम ५ अंगों के अन्त में उद्देशनकालों का उल्लेख है.

५. प्रश्नव्याकरण के ४५ उद्देशनकाल समवयांग और नंदीसूत्र में लिखे गये हैं. किन्तु यह विलुप्त हो गया है. वर्तमान में उपलब्ध प्रश्नव्याकरण के अंत में १० उद्देशन काल लिखे हैं.

६. वीस वर्ष के इस लम्बे पाठ्यक्रम में आचारांग ज्ञाताधर्मकथा उपासकदशा अंतकृद्दशा अनुत्तरोपपातिकदशा प्रश्नव्याकरण विपाकश्रुत तथा सर्व उपांग एवं मूलसूत्रों के अध्ययन का उल्लेख नहीं है, किन्तु आचारांग नियुक्ति गाथा १० में नवदीक्षित के लिए सर्वप्रथम आचारांग के अध्ययन करने का उल्लेख है तथा दशवैकालिक उत्तराध्ययन नंदि आदि आगमों का अध्ययन भी नवदीक्षितों को कराने की परिपाटी अद्यावधि प्रचलित है. इन विभिन्न मान्यताओं का मूल क्या है ? यह अन्वेषणीय है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हो और कम से कम आचार प्रकल्प (निशीथ) का मर्मज्ञ हो तो वह उपाध्याय पद के योग्य होता है.[1]

पांच वर्ष की दीक्षापर्याय वाला श्रमण यदि उक्त आध्यात्मिक योग्यता वाला हो और कम से कम दशाश्रुतस्कन्ध, बृहत्कल्प और व्यवहार सूत्र का ज्ञाता हो तो वह आचार्य और उपाध्याय पद के योग्य होता है.

आठ वर्ष के दीक्षा पर्यायवाला श्रमण यदि उक्त आध्यात्मिक योग्यता वाला हो और कम से कम[2] स्थानांग समवायांग का ज्ञाता हो तो वह आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक स्थविर गणि और गणावच्छेदक पद के योग्य होता है.

निर्धारित पाठ्यक्रम का अध्ययन करने योग्य[3] वय

सामान्यतया जिस श्रमण-श्रमणी के बगल में बाल पैदा होने लगते हैं, वह (श्रमण, श्रमणी) आगमों के अध्ययन योग्य वय वाला माना गया है.

अनुयोगों के अनुसार आगमों का वर्गीकरण

अनुयोगों के अनुसार आगमों का चार विभागों में विभाजन किया गया है. यथा—१. चरणकरणानुयोग, २. धर्मकथानुयोग ३. द्रव्यानुयोग, एवं ४. गणितानुयोग. यह विभाजन इस प्रकार है—

चरणकरणानुयोग—दशवैकालिक, बृहत्कल्प, व्यवहार, निशीथ, आवश्यक, प्रश्नव्याकरण, चउसरणपयन्ना, आतुर-प्रत्याख्यान, महाप्रत्याख्यान भक्तपरिज्ञा, संस्तारक, गच्छाचार, मरणसमाधि, चन्द्रावेध्यक, पर्यंताराधना, पिंड विशोधि.

धर्मकथानुयोग—ज्ञाताधर्मकथा, उपासकदशा, अन्तकृद्दशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, विपाकश्रुत, निरयावलिका [कप्पिया] कप्पवडंसिया, पुप्फिया, पुष्पचूलिका, वह्निदशा, ऋषिभाषित, जम्बूस्वामी अध्ययन, सारावली.

द्रव्यानुयोग—प्रज्ञापना, नंदीसूत्र.

गणितानुयोग—चन्द्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति, ज्योतिष्करण्डक, द्वीपसागर प्रज्ञप्ति, गणिविद्या, योनि प्राभृत, तिथि प्रकीर्णक.[4]

आगम के दो भेद—मूलतः आगमों के दो विभाग हैं : १. अंग प्रविष्ट[5] और २. अंगबाह्य.[6] जिन आगमों में गणधरों ने तीर्थंकर भगवान् के उपदेश को ग्रथित किया है, उन आगमों को अंगप्रविष्ट कहते हैं. आचारांग आदि बारह अंग अंगप्रविष्ट हैं. द्वादशांगी के अतिरिक्त आगम अंग बाह्य हैं.

अङ्गबाह्य के दो भेद—आवश्यक और आवश्यकव्यतिरिक्त. आवश्यक के ६ भेद हैं—१. सामायिक, २. चतुर्विंशतिस्तव, ३. वंदना, ४. प्रतिक्रमण, ५. कायोत्सर्ग, ६. प्रत्याख्यान.

---

१. कोई भी श्रमण उक्त आध्यात्मिक योग्यता के विना चाहे वह कितने ही आगमों का ज्ञाता हो—उपाध्याय आदि पदों का अधिकारी नहीं हो सकता—व्यव० उद्दे० ३.

२. उक्त योग्यता से अल्प योग्यता वाला उपाध्याय आचार्य आदि पदों के अयोग्य होता है.

३. उक्त योग्य वय वाले पात्र को निर्धारित पाठ्यक्रम का अध्ययन न कराना भी एक प्रकार का अपराध है. निशी० उद्दे० १६.

४. शेष सभी आगमों में अनुयोगों का मिश्रण है किसी में दो किसी में तीन और किसी में चारों अनुयोगों का मिश्रण है.

५. अंग प्रविष्ट—नंदीसूत्र 'अंग प्रविष्ट' आगमों की सूची है. उसमें बारह अंगों के नाम हैं किन्तु 'प्रविष्ट' शब्द कुछ विशिष्ट अर्थ रखता है. कुछ विद्वानों का यह अभिमत है कि स्थानांग में जिस प्रश्नव्याकरण का उल्लेख है वह विलुप्त हो गया है और उसके स्थान पर वर्तमान प्रश्न व्याकरण जो है वह अंग प्रविष्ट है. इसी प्रकार विपाक, अन्तकृद्दशा, आचारांग का द्वितीय श्रुतस्कन्ध और समवायांग का १०० वें समवाय के पीछे का भाग अंग प्रविष्ट है.

६. उपांग, मूल और सूत्रों के सम्बन्ध में प्रायः ऐसे उल्लेख मिलते हैं कि—अमुक पूर्व में से अमुक आचार्य ने इस आगम को उद्धृत किया है. चौदह पूर्व दृष्टिवाद के विभाग हैं और दृष्टिवाद बारहवां अंग है किन्तु दृष्टिवाद में से उद्धृत आगमों को अंग प्रविष्ट न मानकर अंग बाह्य मानना विचारणीय अवश्य है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आवश्यक व्यतिरिक्त के २ भेद हैं—कालिक[1] और उत्कालिक. इनकी सूची इस प्रकार है—

उत्कालिक सूत्र—१ दशवैकालिक, २ कल्पिकाकल्पिक, ३. चुल्ल (लघु) ३ कल्पसूत्र, ४ महाकल्प सूत्र, ५ औपपातिक, ६ राजप्रश्नीय, ७ जीवाभिगम, ८ प्रज्ञापना, ९ महाप्रज्ञापना, १० प्रमादाप्रमादम्, ११ नंदीसूत्र, १२ अनुयोगद्वार, १३ देवेन्द्रस्तव, १४ तंदुल वैचारिक, १५ चन्द्रावेध्यक, १६ सूर्य प्रज्ञप्ति,[2] १७ पौरुषी मंडल, १८ मंडल प्रवेश, १९ विद्याचरणविनिश्चय, २० गणिविद्या, २१ ध्यानविभक्ति, २२ मरणविभक्ति, २३ आत्मविशोधि, २४ वीतराग श्रुत २५ संलेखना श्रुत, २६ विहारकल्प, २७ चरणविधि, २८ आतुरप्रत्याख्यान, २९ महाप्रत्याख्यान, इत्यादि.

कालिक सूत्र—१ उत्तराध्ययन,[3] २ दशा [दशाश्रुतस्कन्ध], ३ कल्प [बृहत् कल्प], ४ व्यवहार, ५ निशीथ, ६ महानिशीथ, ७ ऋषिभाषित, ८ जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, ९ द्वीपसागर प्रज्ञप्ति, १० चन्द्र प्रज्ञप्ति, ११ क्षुद्रिकाविमान प्रविभक्ति, १२ महल्लिका प्रविभक्ति, १३ अंग चूलिका, १४ वर्ग चूलिका, १५ विवाह चूलिका, १६ अरुणोपपात, १७ वरुणोपपात, १८ गरुडोपपात, १९ धरणोपपात, २० वैश्रमणोपपात २१ वैलंधरोपपात, २२ देवेन्द्रोपपात, २३ उत्थानश्रुत, २४ समुत्थानश्रुत, २५ नागपरिज्ञावर्णिका, ३६ निरयावलिका, २७ कल्पिका, २८ कल्पावतंसिका, २९ पुष्पिका, ३० पुष्पचूलिका, ३१ वृष्णिदशा, ३२ आशिविष भावना, ३३ दृष्टिविष भावना, ३४ स्वप्न भावना, ३५ महास्वप्न भावना, ३६ तेजोग्नि निसर्ग.

आगम के दो भेद—लौकिक और लोकोत्तर

अनुयोगद्वार में केवल आचारांगादि द्वादशांगों को ही लोकोत्तर आगम माना है. इसी प्रकार लोकोत्तर श्रुत भी आचारांग आदि द्वादशांग ही माने गये हैं.

आगम के दो भेद—गमिक और अगमिक, गमिक[4]—दृष्टिवाद, अगमिक[5]—कालिकसूत्र

आगम के तीन भेद—(१) सूत्रागम (२) अर्थागम (३) तदुभयागम.

सूत्रागम—मूलरूप आगम को सूत्रागम कहते हैं.

अर्थागम—सूत्र-शास्त्र के अर्थरूप आगम को अर्थागम कहते हैं.

तदुभयागम—सूत्र और अर्थ दोनों रूप आगम को तदुभयागम कहते हैं. —अनुयोगद्वारसूत्र १४३

आगम के और तीन भेद हैं—(१) आत्मागम (२) अनन्तरागम (३) परम्परागम.

आत्मागम—गुरु के उपदेश विना स्वयमेव आगमज्ञान होना आत्मागम है. जैसे—तीर्थंकरों के लिए अर्थागम आत्मागम रूप है और गणधरों के लिए सूत्रागम आत्मागमरूप है.

---

१. (क) कालिक और उत्कालिक वर्गीकरण का रहस्य क्या है, यह अब तक दृष्टि पथ में नहीं आया.
(ख) यहां उत्कालिक सूत्र २९ के नाम लिखे हैं किन्तु अन्त में 'इत्यादि' का कथन होने से अन्य नाम का होना भी सम्भव है.
(ग) कालिक सूत्रों के अन्त में 'इत्यादि' का उल्लेख नहीं है अतः अन्य सूत्रों का परिगणन करना उचित नहीं माना जा सकता है.

२. सूर्य प्रज्ञप्ति को उत्कालिक और चन्द्र प्रज्ञप्ति को कालिक मानने का क्या कारण है जबकि दोनों उपांग हैं और दोनों के मूल पाठों में पूर्ण साम्य है ?

३. उत्तराध्ययन यदि भ० महावीर की अन्तिम अपुट्ठ वागरणा है तो उसे अंगबाह्य कैसे कहा जा सकता है, यह विचारणीय है. क्योंकि सर्वज्ञ कथितं और गणधरग्रथित आगम अंगप्रविष्ट माना जाता है.

४. नंदीसूत्र में निर्दिष्ट इस वर्गीकरण से एक आशंका पैदा होती है—कि उत्कालिक सूत्र गमिक हैं या अगमिक ? क्योंकि केवल कालिक सूत्र अगमिक हैं. नंदी सूत्र में कालिक और उत्कालिक ये दो भेद केवल अंग बाह्य सूत्रों के हैं—अतः अंगप्रविष्ट अर्थात्—ग्यारह अंग कालिक हैं या उत्कालिक, यह ज्ञात नहीं होता. ग्यारह अंग गमिक हैं या अगमिक ? यह भी निर्णय नहीं होता. परम्परा से ग्यारह अंगों को अगमिक और कालिक मानते हैं किन्तु इसके लिए आगम प्रमाण का अन्वेषण आवश्यक है.

५. अनुयोगद्वार में कालिक श्रुत को और दृष्टिवाद को भिन्न-भिन्न कहा है अतः दृष्टिवाद कालिक है या उत्कालिक ? यह भी विचारणीय है, क्योंकि नंदी सूत्र में कालिक एवं उत्कालिक की सूची में द्वादशांगों का निर्देश नहीं है.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगमों का वर्गीकरण

आगम

- अंगप्रविष्ट
  - १ आचार
  - २ सूत्रकृत
  - ३ स्थान
  - ४ समवाय
  - ५ भगवती
  - ६ ज्ञातृधर्म-कथा
  - ७ उपासकदशा
  - ८ अन्तकृद् दशा
  - ९ अनुत्तरोपपातिक दशा
  - १० प्रश्नव्याकरण
  - ११ विपाक
  - १२ दृष्टिवाद
- अनंगप्रविष्ट
  - आवश्यक
    - १ सामायिक
    - २ चतुर्विंशतिस्तव
    - ३ वन्दना
    - ४ प्रतिक्रमण
    - ५ कायोत्सर्ग
    - ६ प्रत्याख्यान
  - आवश्यकअतिरिक्त
    - कालिक
    - उत्कालिक

कालिक

१ उत्तराध्ययन	२ दशाश्रुतस्कन्ध
३ कल्प	४ व्यवहार
५ निशीथ	३ महानिशीथ
७ ऋषिभाषित	८ जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति
९ दीपसागर प्रज्ञप्ति	१० चन्द्र प्रज्ञप्ति
११ क्षुल्लिकाविमान-प्रविभक्ति	१२ महल्लिकाविमान-प्रविभक्ति
१३ अंग चूलिका	१४ वग्ग चूलिका
१५ विवाह चूलिका	१६ अरुणोपपात
१७ गरुलोपपात	१८ धरणोवपात
१९ वेसमणोपपात	२० वेलंधरोपपात
२१ देविन्द्रोपपात	२२ उत्थान श्रुत
२३ समुत्थान श्रुत	२४ नागपरियापनिका
२५ कल्पिका	२६ कल्पावतंसिका
२७ पुष्पिका	२८ पुष्प चूलिका
२९ वृष्णिदशा	३० आशीविषभावना
३१ दृष्टिविष भावना	३२ चारण भावना
३३ महास्वप्न भावना	३४ तेजोऽग्निनिसर्ग

उत्कालिक

१ दशवैकालिक	२ कल्पिकाकल्पिक
३ चुल्ल कल्पश्रुत	४ महाकल्पश्रुत
५ औपपातिक	६ राजप्रश्नीय
७ जीवाभिगम	८ प्रज्ञापना
९ महाप्रज्ञापना	१० प्रमादाप्रमाद
११ नन्दी	१२ अनुयोगद्वार
१३ देवेन्द्रस्तव	१४ तंदुलवैचारिक
१५ चन्द्राविध्यक	१६ सूर्यप्रज्ञप्ति
१७ पौरुषीमंडल	१८ प्रवेशमंडल
१९ विद्याचरणविनिश्चय	२० गणिविद्या
२१ ध्यानविभक्ति	२२ मरणविभक्ति
२३ आत्मविशोधि	२४ वीतरागश्रुत
२५ संलेखनाश्रुत	२६ विहारकल्प
२७ चरणविधि	२८ आतुरप्रत्याख्यान
२९ महाप्रत्याख्यान	

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनन्तरागम—सर्वज्ञ से प्राप्त होने वाला आगमज्ञान अनन्तरागम है. गणधरों के लिए अर्थागम अनन्तरागम रूप है. तथा जम्बूस्वामी आदि गणधरों के शिष्यों के लिए सूत्रागम अनन्तरागम रूप है.

परम्परागम—साक्षात् सर्वज्ञ से प्राप्त न होकर जो आगमज्ञान उनके शिष्य प्रशिष्यादि की परम्परा से आता है वह परम्परागम है. जैसे जम्बूस्वामी आदि गणधर-शिष्यों के लिए अर्थागम परम्परागम रूप है. तथा इनके पश्चात् के सभी के लिए सूत्र एवं अर्थ दोनों प्रकार के आगम परम्परागम हैं. —अनुयोगद्वार प्रमाणाधिकारसूत्र १४४

सामायिक आदि ग्यारह अंग :

अंग और उपांगसूत्रों के अनेक कथानकों में "सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ" ऐसा पाठ मिलता है किन्तु ग्यारह अंगों में प्रथम अंग का नाम आचारांग है और उक्त पाठ में ग्यारह अंगों में आदि अंग का नाम (प्रथम अंग) सामायिक अंग है ऐसा प्रतीत होता है.

आचारांगनिर्युक्ति में आचाराङ्ग के अनेक नाम लिखे हैं. उनमें "सामायिक" नाम नहीं है. यदि अन्यत्र कहीं "सामायिक" नाम आचाराङ्ग का उपलब्ध हो तो यह पाठ संगत हो सकता है.

यदि उक्तपाठ में "सामायिक" आवश्यक के प्रथम अध्ययन का नाम अभीष्ट है तो यह एक विचारणीय प्रश्न बन जाता है क्योंकि आवश्यक (आगम) अंगबाह्य है—और सामायिक आवश्यक का प्रथम अध्ययन ग्यारह अंगों में का आदि अंग कैसे माना जा सकता है.

कल्प विधान के अनुसार भ० महावीर के शासन में श्रमणों के लिए "आवश्यक" अनिवार्य मान लिया गया था. फलस्वरूप आवश्यक कण्ठस्थ हुए विना उपस्थापना नहीं हो सकती है ऐसा नियम बन गया था. इसलिए सर्वप्रथम सामायिक आदि आवश्यकों का अध्ययन ग्यारह अङ्गों के अध्ययन से पहले करने का विधान बना था. सम्भव है उक्त पाठ के सम्बन्ध में यही मान्यता रही हो. ऐसी स्थिति में "सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ" का यही अर्थ समझना चाहिए कि कोई साधक सामायिक अर्थात् आवश्यक सूत्र के प्रथम अध्ययन से प्रारम्भ करके ग्यारह अङ्गों का अध्ययन करता है.

भ० नेमिनाथ के अनुयायी मुनि "थावच्चापुत्र" के वर्णन में तथा अन्य कतिपय वर्णनों में भी ऐसा ही पाठ देखा जाता है, ऐसी स्थिति में उक्त सम्भावना कहाँ तक उचित है ? आगमविशारदों के सामने यह प्रश्न अन्वेषणीय है.

आगमों की पांच वाचनाएँ

प्रथमा वाचना :—आचार्य भद्रबाहु की अध्यक्षता में पाटलीपुत्र में हुई, इस समय समस्त श्रमणों ने मिलकर एकादश अङ्गों को व्यवस्थित किया. दृष्टिवाद इस समय विलुप्त हो चुका था.

द्वितीया वाचना :—आर्य स्कन्दिल की अध्यक्षता में मथुरा में हुई. एकत्रित श्रमणों की स्मृति में जितना श्रुत साहित्य था वह व्यवस्थित किया गया.

तृतीया वाचना :—आचार्य नागार्जुन की अध्यक्षता में वलभी में हुई. एकत्रित श्रमणों ने आगमों के मूलपाठों के साथ-साथ आगमों के व्याख्यासाहित्य की संकलना भी की. श्री कल्याणविजयजी महाराज का यह मत है, किन्तु कुछ विद्वानों का यह मत है कि आचार्य नागार्जुन की अध्यक्षता में "आगम" वाचना तो हुई किन्तु किस जगह हुई ? इसलिये कोई ठोस प्रमाण अब तक नहीं मिला. फिर भी आगमों की टीका में यत्र-तत्र 'नागार्जुनीयास्त्वेवं पठन्ति" ऐसा उल्लेख मिलता है अतः आचार्य नागार्जुन की अध्यक्षता में वाचना अवश्य हुई" यह निश्चित है.

चतुर्थी वाचना :—देवर्धि गणि क्षमाश्रमण की अध्यक्षता में वलभी में हुई. सम्मिलित श्रमणों की स्मृति में जितना श्रुत-साहित्य था सारा लिपिबद्ध किया गया.

पञ्चमी वाचना :—आगमों को लिपिबद्ध करने में सबसे बड़ी कठिनाई आगमों के गमिक (समान) पाठों की थी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसलिये समस्त आगमों की संक्षिप्त वाचना का एक संस्करण तय्यार किया गया. इस वाचना में—यत्र तत्र "जहा उववाइए" "जहा पन्नत्तीए" "जहा पन्नवणाए"—आदि लगा कर अनेक गमिक पाठ संक्षिप्त किये गये हैं. अतः इस वाचना को संक्षिप्त वाचना माना जाता है, कई विद्वानों की मान्यता है कि देवर्धि गणि क्षमाश्रमण ही इस वाचना के आयोजक थे.

उस समय प्रत्येक श्रमण को यह लगन लगी थी कि आगमों की प्रतियाँ अल्प भार वाली बनें जिससे विहार में हर एक श्रमण आगमों की कुछ प्रतियाँ साथ में रख सकें. इसलिये वे समान पाठों को बिन्दियां लगा कर लिखते थे. यह भी एक संक्षिप्त वाचना के लिये उपक्रम था, किन्तु इसका परिणाम श्रमणों के लिये अच्छा नहीं हुआ. नवदीक्षित श्रमण बिन्दी वाले पाठों की प्रतियों पर स्वाध्याय नहीं कर सके क्योंकि किस अक्षर से कितना पाठ बोलना यह अभ्यास के विना असंभव था.

यदि आगमों के आधुनिक विद्वान् विस्तृत और संक्षिप्त वाचनाओं के संस्करण तय्यार करें तो यह बहुत बड़ी श्रुत-सेवा होगी.

उपलब्ध आगमों में संक्षिप्त और विस्तृत वाचना के पाठ सम्मिलित हैं अतः एक भी आगम ऐसा नहीं है जिसे विस्तृत या संक्षिप्त वाचना का स्वतंत्र आगम कहा जा सके.

अब एक और वाचना की आवश्यकता है

भगवान् महावीर के निर्वाण के पश्चात् ९८० वर्षों में ३-४ वाचनायें हुई किन्तु देवर्धि क्षमाश्रमण के पश्चात् इन १५०० वर्षों में संघ की ओर से सम्मिलित वाचना एक भी नहीं हुई. इस लम्बी अवधि में जैनसंघ—श्वेताम्बर. दिगम्बर, यतिवर्ग, लोंकागच्छ, स्थानकवासी, तेरापंथी आदि अनेक भागों में विभक्त हो गया.

दश वर्ष पश्चात् भ० महावीर को निर्वाण हुये २५०० वर्ष पूरे हो जायंगे अर्थात् सार्ध द्विसहस्राब्दी की स्मृति में श्वेताम्बर जैनों की समस्त शाखा-प्रशाखाओं की ओर से एक सम्मिलित आगमवाचना अवश्य होनी चाहिए और इसके लिये अभी से संयुक्त प्रयत्न होना चाहिए.

आगमों के विलुप्त होने का इतिहास

वीर निर्वाण संवत्	१७० में अन्तिम चार पूर्वो का विच्छेद हुआ.
,,	१००० में पूर्व ज्ञान का सर्वथा विच्छेद हुआ.
,,	१२५० में भगवती सूत्र का ह्रास हुआ.
,,	१३०० में समवायांग का ह्रास हुआ.
,,	१३५० में स्थानाङ्ग का ,,
,,	१४०० में बृहत्कल्प और व्यवहार का ह्रास हुआ.
,,	१५०० में दशाकल्प सूत्र का ,,
,,	१६०० में सूत्रकृताङ्ग का ,,

पश्चात् आचारांग आदि का ह्रास क्रम से होता गया —तीर्थोद्गारिक प्रकीर्णक

वीरात् ९८० वर्ष पश्चात् देवर्धिक्षमाश्रमण की अध्यक्षता में सभी आगम लिख लिये गये थे, यह एक ऐतिहासिक सत्य है. किन्तु नंदी सूत्र में आगमों के जितने पद लिखे हैं क्या वे सब लिखे गये थे ? यदि सब लिखे गये थे तो नंदी सूत्र में प्रत्येक अंग के जितने अध्ययन, उद्देशक, शतक, प्रतिपत्ति, वर्ग आदि लिखे हैं उतने ही उस समय थे या उनसे अधिक थे ?

अधिक थे तो लिखे क्यों नहीं गये ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उतने ही थे तो—उनके इतने ही पद हों यह कभी संभव नहीं कहा जा सकता.

नंदी सूत्र में आगमों के जितने पद लिखे हैं उतने पद नहीं लिखे गये. यदि यह पक्ष मान लिया जाय तो यह प्रश्न हमारे सामने उपस्थित होता है.

देवर्धि क्षमाश्रमण के समय कितने पद थे ? और जितने पद थे उतने पदों का उल्लेख क्यों नहीं किया गया ? उस समय जितने पद थे यदि उनका उल्लेख किया जाता तो इस समय तक कितने पद कम हुए यह स्पष्ट ज्ञात हो जाता.

देवर्धि क्षमाश्रमण के समय में दृष्टिवाद विलुप्त हो गया था और शेष आगमों के भी कतिपय अंश विलुप्त हो गये थे, इसलिये यह स्पष्ट है कि—नंदी में प्रत्येक अंग के जितने पद माने हैं उतने पद तो देवर्धि क्षमाश्रमण के समय में नहीं थे.

आगमों के कतिपय मूल पाठों की मतैक्यता में कुछ बाधायें

आगमों की जितनी वाचनाएँ हुई उन सब में प्रमुख वाचनाचार्यों के सामने पाठभेदों और पाठान्तरों की विकट समस्या समुपस्थित हुई थी, विचारविमर्श के पश्चात् भी सम्मिलित सभी श्रुतधर अन्तिम वाचना के अन्त तक एक मत नहीं हो सके.

फलस्वरूप सर्वज्ञ-प्रणीत आगमों के मूल पाठों में भी कुछ ऐसे पाठों का अस्तित्व रहा, जिनके कारण प्रबल मत-भेद पैदा हो गये और भ० महावीर का संघ अनेक गच्छ-सम्प्रदायों में विघटित हो गया.

परम योगीराज श्री आनन्दघन ने अनंत जिनस्तुति में संघ की वास्तविक स्थिति का नग्न चित्र इन शब्दों में उपस्थित किया है.

> गच्छना भेद बहु नयन निहालतां, तत्त्व नी बात करतां न लाजे,
> उदरभरणादि निज काज करता थकां, मोह नड़िया कलिकाल छाजे,

देवर्धि क्षमाश्रमण के समय में अंग आगमों के जितने अध्ययन उद्देशे शतक आदि थे उतने ही वर्तमान में हैं. केवल प्रश्न-व्याकरण में आमूल-चूल परिवर्तन हुआ है. भगवती और अंतगड के अध्ययन आदि में अवश्य कमी आई है, शेष आगम तो ज्यों के त्यों हैं. निष्कर्ष यह है कि लिपिबद्ध होने के पश्चात् आगम साहित्य का ह्रास इतना नहीं हुआ जितना देवर्धि क्षमाश्रमण के पूर्व हुआ. यह सिद्ध करने के लिये यहाँ कतिपय ऐतिहासिक प्रमाण प्रस्तुत हैं.

१. भद्रबाहु के युग में उत्तर भारत में भयंकर दुष्काल पड़ा. दुर्भिक्ष के कारण जैन संघ इधर-उधर बिखर गया. यह दुष्काल भ० महावीर के निर्वाण के पश्चात् दूसरी शताब्दी में हुआ था, आचार्य स्थूलिभद्र की अध्यक्षता में पाटलिपुत्र में श्रमण-संघ सम्मिलित हुआ. इसमें ग्यारह अंगों का संकलन किया गया.

२. पाटलीपुत्र परिषद् के अनन्तर देश में दो बार बारह वर्षों के दुष्काल पड़े. इनमें साधु संस्था और साहित्य का संग्रह छिन्न-भिन्न हो गया.

३. विक्रम के ५०० वर्ष बाद भारत में एक भयंकर दुष्काल पड़ा उसमें फिर जैन धर्म का साहित्य इधर-उधर अस्त-व्यस्त हो गया. पाटलीपुत्र और माथुरी वाचना के बाद वल्लभी वाचना का यही समय था, इस दुष्काल में अनेक श्रुतधर काल-धर्म को प्राप्त हो गये थे, शेष बचे हुए साधुओं को वीर संवत् ९८० में संघ के आग्रह से देवर्धि क्षमाश्रमण ने निमंत्रित किया और वल्लभी में उनके मुख से—अवशेष रहे हुए खण्डित अथवा अखण्डित आगम-पाठों को संकलित किया.

व्याख्या भेद—भ० महावीर के संघ में कुछ ऐसे प्रमुख आचार्य भी हुए जिन्होंने अपनी मान्यतानुसार कतिपय मूल पाठों की व्याख्याएँ की. इससे पाक्षिक एवं सांवत्सरिक पर्व सम्बन्धी मतभेद जैन संघ में इतने दृढ—बद्धमूल हो गये हैं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनका उन्मूलन अनेक मुनि-सम्मेलनों के संगठित प्रयत्नों के पश्चात् भी नहीं हुआ.

तीर्थंकर का वचनातिशय और कतिपय सन्देहजनक शब्द—तीर्थंकरों का एक अतिशय[1] ऐसा है कि जिसके प्रभाव से देव, दानव, मानव और पशु सभी अपनी अपनी भाषा में जिनवाणी को परिणत कर लेते हैं. जिनवाणी से श्रोताओं की शंकाओं का उन्मूलन हो जाता है, किन्तु उपलब्ध अंगादि आगमों में मांस, मत्स्य, अस्थिक, कपोत, मार्जार और जिन-पडिमा, चैत्य, सिद्धालय आदि शब्दों के प्रयोग सन्देहजनक हैं. यद्यपि टीकाकारों ने इन भ्रान्तिमूलक शब्दों का समाधान किया है फिर भी इन शब्दों के सम्बन्ध में यदा-कदा विवाद खड़े हो ही जाते हैं.

प्रश्न यह है कि सर्वज्ञकथित एवं गणधर ग्रथित आगमों में इन शब्दों के प्रयोग क्यों हुए ? क्योंकि सूत्र[2] सदा असंदिग्ध होते हैं.

आगमों का लेखनकाल—स्थानकवासी समाज में आगमों का लेखनकाल विक्रम की १६ वीं शताब्दी है. स्वाध्याय के लिए और ज्ञानभण्डारों के लिए आगमों की प्रतिलिपियां कराने वालों ने व्यवसायी लेखकों को मूल, टीका, टब्बा आदि की जैसी प्रतियाँ दी वैसी ही प्रतिलिपियों का सर्वत्र प्रचार हुआ.

इतिहास से यह निश्चित है कि १४ वीं शताब्दी तक आगमों की जितनी प्रतिलिपियाँ हुईं वे सब चैत्यवासियों की देख-रेख में हुईं और आगमों के व्याख्या-ग्रन्थ भी इसी परम्परा के लिखे हुये थे. आरम्भ में स्थानकवासी परम्परा को आगमों की जितनी प्रतियाँ मिलीं वे सब चैत्यवासी विचारधारा से अनुप्राणित थीं.

लोंकाशाह लिखित आगमों की प्रतियां—लोंकाशाह लेखक थे और शास्त्रज्ञ भी थे. वे प्रतिमा पूजा के विरोधी थे किन्तु उनके लिखे हुए आगमों की या उनकी मान्यता की व्याख्या करने वाले आगमों की प्रतियां किसी भी संग्रहालय में आज तक उपलब्ध नहीं हुई हैं. अतः वादविवाद के प्रसंगों में स्थानकवासी मान्यता समर्थक प्राचीन प्रतियों का अभाव अखरता है.

स्थानकवासी परम्परा के दीक्षा आदि पावन प्रसंगों पर लेखकों से जो आगमों की प्रतियां ली जाती हैं वे सब प्रायः श्वेताम्बर मूर्तिपूजक मान्यता की व्याख्या वाली होती हैं. वास्तव में स्थानकवासी मान्यता की व्याख्या वाली प्रतियों के प्रचार व प्रसार के लिये संगठित प्रयत्न हुआ ही नहीं.

आगमों की दरियापुरी प्रतियां—गुजरात की दरियापुरी प्रतियाँ प्रायः सभी ज्ञानभण्डारों में मिलती हैं किन्तु उनमें भी विवादास्पद स्थानों की स्थानकवासी मान्यता की व्याख्या नहीं मिलती, इसलिये आगामी मुनि-सम्मेलनों में इस संबंध में विचार-विनिमय होना आवश्यक है.

जैनागमों का मुद्रणकाल—स्थानकवासी समाज में सर्वप्रथम आगमबत्तीसी (हिंदी अनुवाद सहित) का मुद्रण दानवीर सेठ ज्वालाप्रसाद जी ने करवाया.

सम्पूर्ण बत्तीसी का हिंदी अनुवाद स्व० पूज्य श्री अमोलख ऋषि जी म० ने किया.

श्वेताम्बर मूर्तिपूजक समाज में दानवीर सेठ धनपतराय जी ने सर्वप्रथम जैनागमों का मुद्रण करवाया.

आचार्य सागरानन्द सूरि ने आगमोदय समिति द्वारा अधिक से अधिक आगमों की टीकाओं का प्रकाशन करवाया.

पुप्फ भिक्खु द्वारा सम्पादित सुत्तागमे का प्रकाशन हुआ है किन्तु मांस-परक और जिनप्रतिमा सम्बन्धी कई पाठों को निकाल देने से इस प्रकाशन की प्रामाणिकता नहीं रही है.

---

१. तेईसवां अतिशय   २. प्रश्नव्याकरण द्वितीय संवर द्वार, अनुयोगद्वार, व्याख्याप्रज्ञप्ति देखें.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एक-एक दो-दो आगमों के प्रकाशन तो कई जगह से हुए हैं. किंतु इनका व्यापक क्षेत्र नहीं बन सका क्योंकि साम्प्रदायिक दृष्टिकोण सर्वत्र प्रगति का बाधक बनता रहता है.

भावी प्रकाशन—इस युग में आगमबत्तीसी के एक ऐसे संस्करण की आवश्यकता है जो सर्वश्रेष्ठ मुद्रण-कला से मुद्रित हो और पाकेट साइज में एक जिल्द में चार अनुयोगों में वर्गीकृत एवं पुनरुक्ति रहित हो.

तमेव सच्चं णिस्संकं जं जिणेहिं पवेइयं—वही असंदिग्ध सत्य है जो जिन भगवान् ने कहा है. जैनागमों का यह संक्षिप्त पर्यालोचन जिस रूप में मैं चाहता था उस रूप में प्रस्तुत नहीं कर सका. इसमें एक प्रमुख कारण था—पर्याप्त साहित्य सामग्री का अभाव.

श्रद्धेय क्षमाश्रमण श्री हजारीमलजी महाराज सा० के श्री-चरणों में रहने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है. उनकी आदर्श आगम-भक्ति की अमिट छाप मेरे हृदय पर अंकित है. उनके श्रीमुख से "तमेव सच्चं णिस्संकं जं जिणेहिं पवेइयं" यह वाक्य सदा सर्वदा प्रस्फुटित होता रहता था. वे मुझ से अनेक वार आगमों का स्वाध्याय सुनते, यथाप्रसंग चिन्तन मनन का प्रसाद देते और जरा-जर्जरित देह से भी नियमित स्वाध्याय करते थे. उनके पुनीत पाद-पद्मों की स्मृति में मेरा यह अल्प अर्घ्य सभक्ति समर्पित है.

श्रमणोत्तम श्री हजारीमल जी महाराज की स्मृति में प्रकाशित यह "स्मृतिग्रंथ" शुद्ध सात्विक ज्ञानयज्ञ है. स्तुतिग्रंथ के संपादकों की यह महान् श्रुतसेवा और दानदाताओं की ज्ञान-भक्ति युग-युग तक अमर रहेगी. साथ ही स्वाध्याय-शील पाठकों की ज्ञान आराधना सदा सर्वदा सफल होती रहेगी.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org